कर्नाटक चुनाव नतीजे: फिरकापरस्ती की करारी शिकस्त /राम पुनियानी

कर्नाटक विधानसभा चुनाव के नतीजे न केवल सुकून देने वाले हैं बल्कि ये देश को एक करने और भारत के संविधान की मूल्यों को पुनर्स्थापित करने के अभियान की शुरुआत भी हो सकते हैं. कहने की ज़रुरत नहीं कि देश की एकता और हमारा संविधान दोनों पर ही पिछले कई वर्षों से खतरे के बादल मंडरा रहे हैं.

सन 2018 में कर्नाटक में हुए चुनाव में भाजपा को 104, कांग्रेस को 80 और जेडीयू को 37 सीटें मिलीं थीं. चुनाव के बाद कांग्रेस और जेडीएस ने मिलकर सरकार बनाई जिसे 'ऑपरेशन लोटस' (जो भाजपा द्वारा चुने हुए जनप्रतिनिधियों को खरीदने की कवायद का नाम है) के अंतर्गत गिरा दिया गया और राज्य में भाजपा ने अपनी सरकार बना ली. इस बार कांग्रेस को 135 सीटें और 43 प्रतिशत मत प्राप्त हुए हैं. मात्र 65 सीटों और 36 प्रतिशत वोट के साथ भाजपा उससे काफी पीछे है.

कर्नाटक में भाजपा ने बाबा बुधनगिरी दरगाह (एक सूफी पवित्रस्थल जिसके हिन्दू मठ होने का दावा किया गया था) और हुबली के ईदगाह मैदान जैसे मुद्दों के आसपास राजनीति कर अपने लिए जगह बनाई थी. अपनी सरकार के कार्यकाल में भाजपा ने वहां राममंदिर, गाय-बीफ और लव जिहाद जैसे अपने पुराने मुद्दों के अलावा, हिजाब, अज़ान और हलाल जैसे नए मुद्दे भी उछाले. भाजपा को चुनाव में फायदा पहुँचाने के लिए झूठ, सफ़ेद झूठ और केवल झूठ पर आधारित प्रोपेगंडा फिल्म 'द केरला स्टोरी' को मतदान के ठीक पहले रिलीज़ किया गया. इस फिल्म की शान में प्रधानमंत्री तक ने कसीदे पढ़े.

हमेशा की तरह, भाजपा ने इस बार भी 'मोदी के जादू' को अपने चुनाव अभियान का अहम आधार बनाया. प्रधानमंत्री और अमित शाह ने कर्नाटक में काफी समय बिताया और ढेर सारी रैलीयां, रोड शो और सभाएं कीं. जिस समय भाजपा-शासित मणिपुर भयावह हिंसा की गिरफ्त में था, वहां पचास लोग मारे जा चुके थे, हजारों बेघर हो गए थे और कई चर्चों को ज़मींदोज़ कर दिया गया था, उस समय भाजपा सरकार के ये दोनों शीर्ष नेता कर्नाटक में चुनाव प्रचार में व्यस्त थे. इस अवधि में प्रधानमंत्री ने मणिपुर में शांति की स्थापना के लिए एक भी अपील जारी नहीं की और ना ही उन्हें वहां भड़की हिंसा की आग को बुझाने के लिए राज्य की यात्रा करने की ज़रुरत समझी.

चुनाव के ठीक पहले उन्होंने यह झूठ भी फैलाया कि मैसूर के लोकप्रिय शासक टीपू सुल्तान सन 1799 में चौथे आंग्ल-मैसूर युद्ध में अंग्रेजों के हाथों नहीं मारे गए थे वरन दो वोक्कालिंगाओं ने उनकी हत्या की थी. इसका उद्देश्य था इस्लामोफोबिया फैलाना और वोक्कालिंगा समुदाय का समर्थन हासिल करना. इतिहास को इसी तरह तोड़मरोड़ कर भाजपा ने उत्तर भारत के कई राज्यों में वोटों की भरपूर फसल काटी है. परन्तु इतिहास को विकृत कर उसका इस्तेमाल साम्प्रदायिकता फैलाने के लिए करने का भाजपा का पुराना खेल कर्नाटक में नहीं चला.

कर्नाटक के चुनाव के पहले देश में कई बड़े सामाजिक आन्दोलन हुए थे. केंद्र की भाजपा सरकार द्वारा प्रस्तावित तीन कृषि कानूनों के खिलाफ आज़ादी की बाद किसानों का सबसे बड़ा आन्दोलन हुआ था. इसी अवधि में राष्ट्रीय नागरिकता पंजी (एनआरसी) और नागरिकता संशोधन अधिनियम (सीएए) के ज़रिये मुसलमानों को मताधिकार से वंचित करने के प्रयास भी हुए. इसी पृष्ठभूमि में कांग्रेस के राहुल गाँधी ने भारत जोड़ो यात्रा निकाली. यह यात्रा काफी सफल रही और किसान व शाहीन बाग़ आन्दोलनों के साथ मिलकर इसने देश का मिजाज़ और मूड को बदल दिया. यात्रा में नफरत को भगाने और मोहब्बत को जगाने की बात कही गयी, बेईमान पूंजीपतियों से भाजपा के नजदीकी रिश्तों का खुलासा किया गया और बढ़ती गरीबी, भूख, बेरोज़गारी और दलितों, महिलाओं और आदिवासियों से जुड़े मुद्दे उठाए गए.

इस यात्रा ने निश्चित रूप से राहुल गाँधी की छवि को बदल दिया. उन्हें 'पप्पू' कहकर उनका मजाक उड़ाने वालों को भी समझ में आ गया कि वे एक मानवतावादी नेता हैं जिनके सरोकार आम आदमी की समस्याएं हैं. वे उन राजनेताओं में से नहीं हैं जो दिन में कई बार कपड़े बदलते हैं और अपनी 56 इंच चौड़ी छाती के गीत गाते हैं.

कांग्रेस ने राज्य के लोगों को जो वायदे किये वे बेरोजगारों, महिलाओं और गरीब वर्ग के कल्याण से जुड़े हुए थे. वर्तमान पारिस्थितियों में भी साहस दिखाते हुए पार्टी ने बजरंग दल और पीएफआई (जो प्रतिबंधित है) को समतुल्य बताया और कहा कि नफरत फैलाने और हिंसा फैलाने वाले संगठनों को प्रतिबंधित किया जायेगा.

मोदी एंड कंपनी बस ऐसे ही मौके के इंतज़ार में थे. नरेन्द्र मोदी ने तुरंत इस मुद्दे को पकड़ लिया. उन्होंने उद्घोषणा की कि पहले कांग्रेस ने भगवान राम को जेल में रखा और अब वह भगवान हनुमान के साथ यही करने जा रही है. उन्होंने समर्पण और शक्ति के प्रतीक भगवान हनुमान को बजरंग दल से जोड़ दिया-एक ऐसे संगठन से जिसका घोषणापत्र हिंसा के रास्ते हिन्दू क्रांति का आवाहन करता है और जिसके अनेक नेताओं और कार्यकर्ताओं का नाम हिंसा से जुड़े मामलों में सामने आता रहा है. वे अपनी सभाओं के अंत और शुरू में 'जय बजरंग बली' का नारा बुलंद करने लगे.

कई लोगों का ख्याल था कि कांग्रेस ने विघटनकारी मुद्दों को उछालने में सिद्धहस्त लोगों को एक नया मुद्दा दे दिया है. परन्तु अंततः सिद्ध यही हुआ कि कांग्रेस का यह साहसिक निर्णय सही था और उसने भाजपा के सांप्रदायिक अभियान की हवा निकाल दी. कांग्रेस नेताओं ने भगवान हनुमान की तुलना बजरंग दल से करने को हनुमानजी का अपमान बताया और मतदाताओं को यह सही लगा.

कांग्रेस ने आमजनों से जुड़े मुद्दों को उठाया वहीं भाजपा ने सांप्रदायिक खेला का सहारा लिया. चुनाव नतीजों के विश्लेषण से पता चलता है कि कांग्रेस को निर्धन, निम्न जातियों के और ग्रामीण मतदाताओं का भरपूर समर्थन मिला जबकि भाजपा का साथ देने वालों में शहरी, उच्च जाति के और कुलीन मतदाता थे. कई विश्लेषक लिंगायत और वोक्कि्लंगा समुदायों के सन्दर्भ में परिणामों का विश्लेषण कर रहे हैं परन्तु ऐसे लगता है कि भाजपा को पसंद करने वालों में उच्च जाति के उच्च शिक्षित और अच्छी आमदनी वाले पुरुष मतदाताओं का बहुमत है.

बहरहाल, यह पक्का है कि इन चुनाव परिणामों का भारतीय राजनीति पर गहरा प्रभाव पड़ेगा. राहुल गाँधी और कांग्रेस की छवि बेहतर होगी और उनका मनोबल बढेगा और यह भ्रम टूटेगा कि मोदी और भाजपा अजेय हैं. अगर कर्नाटक में जो कुछ हुआ उसके निहितार्थ आमजनों तक ठीक ढंग से पहुंचाए जाएं तो इससे साम्प्रदायिकता का बोलबाला कम होगा.

एक और बात जो स्पष्ट हो गयी है वह यह है कि अगर आम चुनाव में भाजपा और कांग्रेस में सीधा मुकाबला होता है तो भाजपा को धूल चटाई जा सकती है. इन नतीजों से उन लोगों को बल मिलेगा जो लगातार यह कह रहे हैं कि देश के धर्मनिरपेक्ष और प्रजातान्त्रिक मूल्यों की रक्षा के लिए विपक्ष को एक होना चाहिए.

इस चुनाव में नागरिक समाज समूहों ने बड़ी भूमिका निभायी है. उन्होंने 'ईडेलू कर्नाटक" (जागो कर्नाटक) और 'बहुत्व कर्नाटक' (बहुवादी कर्नाटक) जैसे अभियान चलाकर भाजपा सरकार की नाकामियों को उजागर किया. कमज़ोर वर्गों के अधिकारों की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध नागरिक समाज संगठनों को इसी तरह की भूमिका आने वाले चुनावों में अदा करनी चाहिए ताकि देश उस पथ पर फिर से अग्रसर हो सके जो पथ हमें हमारे स्वाधीनता आन्दोलन और संविधान ने दिखाया है. (अंग्रेजी से रूपांतरण अमरीश हरदेनिया)

बात बागेश्वरधाम की नहीं है !

राजीव रंजन चतुर्वेदी

सोशल मीडिया पर एक नहीं, अनेक पोस्ट और अनेक तरह की पोस्ट बिहार में हो रहे उस धार्मिक-आयोजन को लेकर पढ़ चुका हूँ , जिसमें लाखों लोग सम्मिलित हो रहे हैं। जो पोस्ट आयोजकों, अनुयायियों तथा पार्टी-जन की ओर से हैं , उनके संबंध में मुझे कुछ नहीं कहना है क्योंकि उनका स्वार्थ उससे जुड़ा हुआ है लेकिन इनमें कुछ पोस्ट सुधी मित्रों, प्रोफ़ेसरों, शिक्षाविदों की भी हैं, बात उनके संबंध में ही करनी है।

फ़ोकलोर संबंधी रिसर्च की कुछ अन्तर-राष्ट्रीय पत्रिकाएं पढने को मिल जाती हैं, उनके आधार पर कहने की अनुमति चाहता हूँ कि यदि ऐसे आयोजन विदेशों में हो रहे होते तो हजारों नहीं तो सैकड़ों शोधार्थी अपनी अपनी परियोजनाओं को लेकर वहां जरूर पँहुच चुके होते। मुझे तो यह संभावना भी दिख रही है कि इस आयोजन की श्रृंखला में कभी न कभी कोई न कोई रिसर्चर मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, जनवृत्तशास्त्र, राजनीति, मानवशास्त्र आदि के सवाल को लेकर उधर आयोजन में कहीं घूम रहा होगा।

यहां दो तरह की बातें कही गयी हैं , एक बात उस व्यक्ति को लेकर, दूसरी बात सामान्यजन को लेकर। व्यक्ति के संबंध में भी दो तरह की बातें हैं, एक तरह की पोस्ट उस व्यक्ति के महिमा-मंडन को लेकर लिखी गयी हैं, दूसरी तरह की पोस्ट उस व्यक्ति की आलोचना या निन्दा वाली हैं।

लेकिन अधिकांश ने सामान्यजन को भेड़चाल, अंधविश्वासी जैसी उपाधियों से अलंकृत करके अपने कर्तव्य को पूरा मान लिया है। कुछ ने कहा कि यह तो धर्म की बदमाशी है। जो लोकजीवन में धर्म की भूमिका और धर्मसंस्था के अंतर को नहीं समझते, उनसे भी क्या कहा जाए?

मैं अत्यन्त विनम्रता से यह कहने की अनुमति चाहता हूं कि हमारे देश के विश्वविद्यालय, अकादमी, शोध-संस्थान और उनको चलाने वाले निदेशक, कुलपति और विभागाध्यक्ष लोकजीवन के प्रति सच्चाई के साथ अपने दायित्व के प्रति जागरूक होते तो इतनी सरलीकृत टिप्पणी पढ़ने को नहीं मिलती। अपवाद कम नहीं हैं और वसुंधरा वीर-विहीन भी कभी नहीं हुई किन्तु यह भी सच है कि हमारे विश्वविद्यालयों में मानविकी में सामान्य रूप से जो रिसर्च हुईं, वे किताबों में से आयीं, जीवन की ओर कभी देखने का उनको अवसर मिला ही नहीं, गणेश-परिक्रमा से ही काम बन गया। बड़े-बड़े मठाधीश अपने राजनैतिक- आश्रयों की गणेश-परिक्रमा कर रहे थे,जन से उनको मतलब ही नहीं था।

आजादी से पहले हमारे गोरे-राजा कहा करते थे- ब्लैक इंडियन ऐंड डॉग्स आर नौट ऐलाउड। डॉ. हरद्वारी लाल शर्मा ने अपनी पुस्तक में इस घटना का उल्लेख किया है कि एक गोरा जज अपनी पत्नी से कोर्ट में ही प्यार करने लगा, पेशकार हंस दिया, तो जज बोला कि तुम अपने को आदमी समझते हो ? तुम हिन्दुस्तानियों को हम कुत्ते से ज्यादा तो समझते नहीं हैं।

इन पचहत्तर सालों के बाद यदि कोई बुद्धिजीवी आज भी यही निष्कर्ष दे रहा है कि सामान्यजन भीड़ है,

मैं अत्यन्त विनम्रता से यह कहने की अनुमति चाहता हूं कि हमारे देश के विश्वविद्यालय, अकादमी, शोध-संस्थान और उनको चलाने वाले निदेशक, कुलपति और विभागाध्यक्ष लोकजीवन के प्रति सचाई के साथ अपने दायित्व के प्रति जागरूक होते तो इतनी सरलीकृत टिप्पणी पढ़ने को नहीं मिलती। अपवाद कम नहीं हैं और वसुंधरा वीर-विहीन भी कभी नहीं हुई किन्तु यह भी सच है कि हमारे विश्वविद्यालयों में मानविकी में सामान्य रूप से जो रिसर्च हुईं, वे किताबों में से आयीं, जीवन की ओर कभी देखने का उनको अवसर मिला ही नहीं, गणेश-परिक्रमा से ही काम बन गया। बड़े-बड़े मठाधीश अपने राजनैतिक- आश्रयों की गणेश-परिक्रमा कर रहे थे,जन से उनको मतलब ही नहीं था।

अंधविश्वासी है, मूर्ख है, मतलबी है, डिक्टेटरशाही के लिए है, तो यह बात चिन्ताजनक है।

ये बुद्धिजीवी लोग दिन-रात जिस समानता के सिद्धान्त की बात करते हैं, क्या वह पाखंड है? यहाँ आये लोग कुछ कम आदमी हैं और आप कुछ अधिक आदमी हैं। यदि आदमी दो तरह के होते हैं, तो समानता का सिद्धांत ही असिद्ध हो जाता है। पर सवाल तो यह है कि ये लाखों लोग आदमी हैं कि नहीं?

दूसरा सवाल आपने इनको किस आधार पर बुद्धिहीन जाना? क्या किताब से या किसी सर्वेक्षण से? अथवा जानने की कभी कोशिश ही नहीं की?

यदि ये भीड़ हैं, अंधविश्वासी हैं, मूर्ख है, मतलबी हैं, डिक्टेटरशाही के लिए हैं तो आप कैसे कह सकते हैं कि मनुष्य इस सृष्टि का सबसे श्रेष्ठ और बुद्धिमान प्राणी है?

यदि वे मूर्ख और बुद्धिहीन हैं, तो आपका यह कथन मिथ्या हो जाता है कि मनुष्य बुद्धिमान प्राणी है और समानता की। आपकी बात पाखंड बन जाती है।

यह बात बिल्कुल ठीक है कि आदमी का आदिगमन भी होता है, आदमी का अचेतन या अवचेतन वह मन भी होता है, जो चमत्कार का सृजन करता है।

वेदना से ग्रस्त मन असामान्य-मन भी होता है।

साथ ही यह भी सोचिये कि यदि हम और आप भी अपने ही ग्राम और कुनबे के इन्हीं लोगों के बीच रह रहे होते तो यह कथन कि ये लोग बुद्धिहीन हैं, कैसा लगता?

कारण स्पष्ट है कि मानविकी ने किताबों के बाहर मानव को जानने की कोशिश नहीं की।

मानव के परिवेश को नहीं जाना, परिवेश का दबाव क्या होता है? उन लोगों की चिन्ताओं, व्यथा-वेदनाओं, परेशानियों, आशा-आकांक्षाओं को जानने के लिए कभी कोई योजनाबद्ध प्रयास हुआ ही नहीं।

आदमी की वे कौनसी विवशताएं हैं, जिनमें इतने लोग एकत्र हो जाते हैं और चालाक लोग उनका शोषण तथा दोहन कर लेते हैं?

इन विवशताओं से निकालने के लिए पचहत्तर सालों में कोई अनुसंधान हो सका या नहीं? क्यों नहीं हो सका?

लाखों की भीड़ में कितने प्रकार के समूह मिलेंगे, जो आशा की किरण ढूंढ़ रहे होंगे।

भीड़ की मानसिकता होती है, जरूर है। गतानुगतिको लोकः या भेड़चाल भी होती है। मेलाप्रेम भी होता है। लोका मति के भोरा भी होता है। भिन्न मतिर्हि लोकः भी मिलेगा तथा लोकस्तदनुवर्तते भी मिलेगा, जरूर मिलेगा।

यह सब केवल बिहार में ही नहीं, नेता लोगों के रोड शो में सभी प्रदेशों में होता है, रैलियों में भी होता है लेकिन ऐसे अवसरों का उपयोग अपने अनुसंधान को बढ़ाने के लिए किया जाना चाहिये क्योंकि मनुष्य का मन बहुत जटिल है, और इसके संबंध में हमारा ज्ञान अभी भी प्राइमरी है।

इनको दुत्कारिये नहीं, बड़े प्यार से इनके मन की बात जानने की कोशिश करिये कि केवल मेला देखने आये हैं या कुछ और बातें भी हैं। वे सभी बातें , जीवन की बातें हैं।

ज्ञान किसे कहते हैं ? जीवन और प्रकृति की बातें ही तो ज्ञान विज्ञान हैं। और ज्ञान विज्ञान उतना ही नहीं है, जितना किताब में लिखा हुआ है।

हाँ, एक बात याद दिलाने की है ,इसी जन को स्वतंत्रता संग्राम के नायकों ने जनार्दन कहा था।